[2013] 9 एस.सी.आर. 1000

सुनील दत्त शर्मा

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार)

(आपराधिक अपील संख्या 1333, 2013)

अक्टूबर 08, 2013

[सुधांसु ज्योति मुखोपाध्याय और रंजन गोगोई, जे.जे.]

दंड संहिता, 1860:

धारा 304-बी- दहेज मृत्यु- दोषसिद्धि और निचली अदालतों द्वारा आजीवन कारावास की सजा, यदि अत्यधिक या अनुपातहीन हो - माना गया। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विकसित सजा के सिद्धांत, हालांकि बड़े पैमाने पर मृत्युदंड के संदर्भ में लागू होंगे। सभी छोटी सजाएं, जब तक कि सजा देने वाले न्यायाधीश के पास पेंडुलम के न्यूनतम से अधिकतम तक के झूले के समान कम या अधिक सजा देने का विवेक निहित है। तत्काल मामले में, साबित तथ्य किस अपराध के आधार पर है। आरोपी-अपीलार्थी को धारा 304-बी के तहत अपराध से बरी करते हुए धारा 304-बी को स्थापित माना गया। धारा 302, मामले पर अत्यधिक विचार करने के लिए उसकी ओर से किसी भी असाधारण, विकृत या शैतानी कृत्य का खुलासा न

करें - सिद्धांतों के संचयी अनुप्रयोग पर जो अपराध और आपराधिक परीक्षण का फैसला करने के लिए प्रासंगिक होगा, यह ऐसा मामला नहीं है जहां अधिकतम आजीवन कारावास की सज़ा दी जानी चाहिए थी साथ ही, ट्रायल कोर्ट के आदेश से, यह स्पष्ट है कि मृतक पर कुछ चोटें, हालांकि स्पष्ट रूप से घातक चोटें नहीं हैं, आरोपी के कारण हैं अपीलकर्ता और इस प्रकार निर्धारित न्यूनतम सजा यानी जी सात साल भी न्याय के उद्देश्यों को पूरा नहीं करेगा, बल्कि दस साल की सजा उचित होगी। तदनुसार आदेश दिया जाएगा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 354(2)

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1001 दिल्ली सरकार)

वाक्य/सज़ा:

भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 304-बी के तहत दंडनीय अपराध के लिए सजा-आयोजित। ऐसी स्थिति में जहां किसी अपराध को कानूनी अनुमान के माध्यम से साबित किया जाता है, अपराध के आसपास की परिस्थितियों में गंभीर परिस्थितियों की उपस्थिति का निर्धारण किया जा सकता है (अपराध परीक्षण) उस मामले के विपरीत आसानी से सामने नहीं आना चाहिए, जहां अपराध के साथ अभियुक्तों की प्रत्यक्ष संलिप्तता को स्थापित करने वाले प्रत्यक्ष आपराधिक कृत्यों के सबूत हों, ताकि अदालत को किए गए अपराध की बर्बर या भ्रष्ट प्रकृति के संबंध में विशिष्ट निष्कर्ष

पर पहुंचने में सक्षम बनाया जा सके। मुकाबला करने की आवश्यकता दहेज की मांग या महिलाओं पर अत्याचारों को रोकने और सामाजिक बुराइयों के साथ-साथ सामाजिक विवेक की शुद्धता बनाए रखने की आवश्यकता सजा की मात्रा का निर्धारण नहीं कर सकती है, क्योंकि उक्त पैरामीटर सभी अपराधों के लिए समान होंगे। धारा 304-बी भा.दं.सं. इसलिए, इसे मामले दर मामले के आधार पर सजा की अलग-अलग डिग्री देने के लिए तर्कसंगत आधार के रूप में कार्य करने के लिए स्वीकार्य न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों की स्थिति तक नहीं बढ़ाया जा सकता है। सजा देते समय ध्यान में रखे जाने वाले कारक धारा 304 भा.दं.सं., चर्चा - दंड संहिता, 1860 - धारा 304-बी।

आरोपी-अपीलकर्ता पर धारा 302 आ ैर 304-बी के तहत दंडनीय अपराधों के लिए मुकदमा चलाया गया। 16/17.05.92 की रात्रि में अपनी पत्नी की मृत्यु कारित करने के लिए उन्हें उक्त धारा के तहत दंडनीय अपराध से बरी कर दिया गया। 302, भा.दं.सं. पर संदेह का लाभ, हालाँकि, उन्हें धारा 304 बी भा.दं.सं. के तहत दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया और आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि की गई।

तत्काल अपील में, केवल अभियुक्त-अपीलकर्ता पर लगाई गई सजा के संबंध में सीमित नोटिस जारी किया गया था।

न्यायालय ने अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए।

सुझाव: 1.1 दंड संहिता के विभिन्न प्रावधानों में विभिन्न अभिव्यक्तियों के उपयोग द्वारा प्रदत्त शक्ति और अधिकार, किसी विशेष अपराध के लिए दोषी पाए गए अपराधी को सजा देने में अदालतों में निहित विशाल विवेक का संकेत देते हैं। कहीं भी, न तो दंड संहिता में और न ही लागू किसी अन्य कानून में, सजा के मामले में व्यापक विवेक के प्रयोग को नियंत्रित करने वाला कोई नुस्खा या मानदंड या दिशानिर्देश भी निर्धारित किए गए हैं, सिवाय कोड की धारा 354(2) के। आपराधिक प्रक्रिया, 1973, जिसमें अन्य बातों के अलावा, अदालत के सी फैसले में दी गई सजा के कारणों को बताने की आवश्यकता होती है, जब निर्धारित सजा वर्षों की अवधि के लिए कारावास है। [पैरा 5] [1008-ए-सी]

1.2 ऐसा कोई कारण नहीं है कि पिछले कुछ वर्षों में इस न्यायालय द्वारा सजा देने के सिद्धांत विकसित किए गए हैं, हालांकि बड़े पैमाने पर मृत्युदंड के संदर्भ में, सभी छोटी सजाओं पर लागू नहीं होंगे, जब तक कि सजा देने वाले न्यायाधीश के पास कम या कम सजा देने का विवेक निहित है। पेंडुलम के न्यूनतम से अधिकतम की ओर झूलने जैसा एक उच्च वाक्य। मुद्दा यद्यपि मुख्य रूप से मृत्युदंड से जुड़े मामलों के संदर्भ में निपटाया जाता है, लेकिन देश के आपराधिक न्यायशास्त्र के लिए इसका अत्यधिक महत्व है क्योंकि लागू विभिन्न विशेष कानूनों के तहत कई

अपराधों के अलावा, दंड संहिता में सैकड़ों अपराध शामिल हैं। जिसके लिए सज़ा एक दिन से लेकर 10 साल तक या जीवन भर तक हो सकती है, यह स्थिति दंड संहिता के विभिन्न प्रावधानों में प्रतीत होने वाली समान अभिव्यक्तियों के उपयोग से संभव हुई है। [पैरा 10 और 12] [1018-डी-ई; 1019-सी-डी]

जगमोहन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1973 (2) एससीआर 541 = (1973) 1 एससीसी 20; बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1980) 2 एससीसी 684; मच्छी सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य, 1983 (3) एससीआर 413 (1983) 3 एससीसी 470; संगीत एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य 2012 (13) एससीआर 85= (2013) 2

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1003 दिल्ली सरकार)

एससीसी 452; शंकर किसनराव खाडे बनाम महाराष्ट्र राज्य (2013) 5 एससीसी 546 - निर्दिष्ट।

1.3 जब तक दहेज की मांग के कारण होने वाली क्रूरता के विश्वसनीय सबूत मौजूद हैं, तब तक शादी के सात साल के भीतर किसी महिला की अप्राकृतिक मृत्यु होने पर ऐसी महिला के पति या पति के किसी रिश्तेदार को "दहेज मृत्यु" के अपराध के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। धारा 304-बी हालांकि संबंधित मृत्यु में पति या ऐसे रिश्तेदार

की कोई प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं हो सकती है। ऐसी स्थिति में जहां किसी अपराध के घटित होने को कानूनी अनुमान के माध्यम से साबित किया जाता है, अपराध के आसपास की परिस्थितियां गंभीर परिस्थितियों (अपराध परीक्षण) की उपस्थिति को निर्धारित करने के लिए आसानी से सामने नहीं आ सकती हैं, उस मामले के विपरीत जहां खुले अपराधी का सबूत है अपराध में अभियुक्त की प्रत्यक्ष संलिप्तता स्थापित करने वाले कार्य, ताकि अदालत को किए गए अपराध की बर्बरतापूर्ण या भ्रष्ट प्रकृति के संबंध में विशिष्ट निष्कर्ष पर पहुंचने में सक्षम बनाया जा सके। [पैरा 13] [1019- एफ-एच; 1020-ए-बी]

1.4 दहेज की मांग के खतरे से निपटने की आवश्यकता या महिलाओं पर अत्याचार और इसी तरह की सामाजिक बुराइयों को रोकने के साथ-साथ सामाजिक विवेक की शुद्धता बनाए रखने की आवश्यकता सजा की मात्रा का निर्धारण नहीं कर सकती है क्योंकि उक्त पैरामीटर सामान्य होंगे धारा के अंतर्गत सभी अपराध। 304-बी भा.दं.सं. इसलिए, मामले दर मामले के आधार पर अलग-अलग डिग्री की सजा देने के लिए तर्कसंगत आधार के रूप में कार्य करने के लिए इसे स्वीकार्य एफ न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों की स्थिति तक नहीं बढ़ाया जा सकता है। [पैरा 13] [1020-बी-डी]

1.5 कारक, अर्थात् विवाह और महिला की मृत्यु के बीच बिताया गया समय, पीड़िता की मृत्यु से पहले उसके प्रति अभियुक्त का रवैया और आचरण, दहेज की मांग किस हद तक जारी रखी गई और क्रूरता किस प्रकार और परिस्थितियों में की गई, यह अपराध परीक्षण के निर्धारण के लिए एक निश्चित आधार होगा। इसके अलावा, तथ्य यह है कि

आरोपी पर भी धारा 302 भादस. के तहत अपराध का आरोप लगाया गया था और उक्त आरोप से उसके बरी होने का आधार एक और बहुत ही प्रासंगिक परिस्थिति होगी। इसके विपरीत, "आपराधिक परीक्षण" का निर्धारण करने वाली शमन/कम करने वाली परिस्थितियों को पूरा खेल खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए। परिस्थितियों के इन दो सेटो को परस्पर असंगत होने के कारण बैलेंस शीट के रूप में व्यवस्थित नहीं किया जा सकता है जैसा कि संगीत में देखा गया है, लेकिन यह विभिन्न परिस्थितियों के दो सेटो का संचयी प्रभाव है जिसे सजा का निर्णय देते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। धारा 304-बी भादसं. के तहत अपराध के संबंध में सजा के प्रश्न से निपटने के दौरान यह सही दृष्टिकोण होगा। [पैरा 13] [1020-डी-एच]

1.6 इस न्यायालय के निर्णय डी द्वारा निर्धारित मापदंडों को तत्काल मामले के तथ्यों पर लागू करने से, यह पता चलता है कि आरोपी-अपीलकर्ता की पत्नी की मृत्यु शादी के दो साल के भीतर हुई थी। दहेज की

मांग की गई थी और क्रूरता या उत्पीड़न का सबूत है। मृतक की शव परीक्षण रिपोर्ट में चोटों के बाहरी निशान दिखे लेकिन मृतक की मौत का कारण गला घोंटने के कारण दम घुटना बताया गया। पोस्टमॉर्टम करने वाले डॉक्टर के उक्त निष्कर्ष के मद्देनजर, ट्रायल कोर्ट ने आरोपी को धारा 302 भादसं. के तहत अपराध से बरी करना उचित समझा, संदेह के लाभ पर है क्योंकि इस बात का कोई सबूत नहीं था कि आरोपी किसी भी तरह से मृतक का गला घोंटने में शामिल था। प्रमाणित तथ्य जिसके आधार पर अपराध धारा 304-बी भादसं. के तहत अपराध से बरी करते हुए भादसं. की धारा 304-बी को स्थापित माना गया। भादसं. की धारा 302, मामले को गंभीरता से लेने के लिए अभियुक्त-अपीलकर्ता की ओर से किसी भी असाधारण, विकृत या शैतानी कृत्य का खुलासा न करें। [पैरा 14] [1021-ए-डी]

1.7 इसके अलावा, अपराध के समय, अभियुक्त-अपीलकर्ता लगभग 21 वर्ष का था और आज तक उनकी उम्र करीब 42 साल है। अभियुक्त-अपीलकर्ता का एक बेटा भी है जो घटना के समय शिशु था। उसका अपराध का कोई पिछला रिकॉर्ड नहीं है। सिद्धांतों के संचयी अनुप्रयोग पर जो अपराध और आपराधिक परीक्षण का फैसला करने के लिए प्रासंगिक होगा, इस न्यायालय का विचार है कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां आरोपी-अपीलकर्ता को अधिकतम आजीवन कारावास की सजा दी जानी चाहिए थी। साथ ही, ट्रायल कोर्ट के आदेश से यह स्पष्ट है कि मृतक की

कुछ चोटें, हालांकि स्पष्ट रूप से घातक चोटें नहीं हैं, आरोपी-अपीलकर्ता के कारण हैं। आदेश के उक्त भाग का हिस्सा ट्रायल कोर्ट के आदेश का हिस्सा नहीं रहा है। उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में चुनौती दी गई। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का मानना है कि मौजूदा मामले में, निर्धारित न्यूनतम सजा यानी सात साल भी न्याय के उद्देश्य को पूरा नहीं करेगी। बल्कि दस साल की सश्रम कारावास की सज़ा उचित होगी। नतीजतन, उच्च न्यायालय के आदेश को संशोधित किया गया है और आरोपी-अपीलकर्ता को धारा 10 के तहत अपराध करने के लिए दस साल की सश्रम कारावास की सजा दी गई है। 304-बी भादसं. जुर्माने की सजा बरकरार रखी गयी है। [पैरा 14] [1021-डी-एच; 1022-ए-सी]

केस कानून संदर्भ:

1973 (2) एससीआर 541 के लिए पैरा 5

(1980) 2 एससीसी 684के लिए पैरा 5

1983 (3) एससीआर 413 के लिए पैरा 5

2012 (13) एससीआर 85 के लिए पैरा 5

(2013) 5 एससीसी 546के लिए पैरा 5

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2013 की आपराधिक अपील संख्या 1333।

1997 की आपराधिक अपील संख्या 449 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के निर्णय और आदेश दिनांक 04.04.2011 से।

मनीषा भण्डारी, सुर्भी अग्रवाल, संकल्प कश्यप, शिल्पा देवान, रामेश्वर प्रसाद गोयल अपीलार्थी की तरफ से।

पी.के. डे, आशा जी. नायर, एस. सैनी, डी.एस. माहरा प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय रंजन गोगोई, जे. दिया गया

1. आरोपी-अपीलकर्ता पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 304-बी (इसके बाद संक्षेप में "दंड संहिता") के तहत अपराध के लिए मुकदमा चलाया गया था। 16/17.05.92 की रात्रि में उनकी पत्नी की मृत्यु को संदेह के लाभ पर दंड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध से बरी कर दिया गया है, हालांकि दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत अपराध के लिए दोषी पाया गया है जिसके बाद आजीवन कारावास की सजा दी गई है। उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि की गई है। व्यथित, अपीलकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय का रुख किया था।

2. इस न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता पर लगाए गए दंड के प्रश्न पर सीमित नोटिस जारी किया गया है, वर्तमान अपील का दायरा छोटा कर दिया गया है इस प्रश्न का निर्धारण कि क्या दंड संहिता की धारा

304-बी के तहत अपराध करने के लिए अभियुक्त-अपीलकर्ता को दी गई आजीवन कारावास की सजा किसी भी तरह से अत्यधिक या अनुपातहीन है ताकि इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

3. दंड संहिता की धारा 304-बी(2) जो धारा 304-बी(1) द्वारा विचारित अपराध के लिए सजा निर्धारित करती है, निम्नलिखित शर्तों में है: "जो कोई भी दहेज हत्या करेगा उसे कारावास से दंडित किया जाएगा जिसकी अवधि सात वर्ष से कम नहीं होगी लेकिन जिसे आजीवन कारावास तक बढ़ाया जा सकता है।" (जोर हमारा है)।

4. जो ऊपर देखा गया है उसके समान अभिव्यक्तियाँ दंड संहिता की विभिन्न धाराओं में पाई जा सकती हैं जिस पर ध्यान दिया जा सकता है।

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1007 दिल्ली सरकार)

(रंजन गोगोई, जे.जे.)

(I) धारा 115, 118, 123, 124,

126, 127, 134, 193, 201,

214, 216, 216ए, 219, 220,

221, 222, 225, 231, 234,

243, 244, 245, 247, 249,

256, 257, 258, 259, 260,

281, 293, 308, 312, 317, "वर्ष/दस वर्ष तक बढ़ाया

325, 333, 363, 365, 369, जा सकता है";

370, 380, 381, 387, 393,

401, 402, 404, 4 07, 408,

409, 433, 435, 437, 439,

452, 455, 466, 468, 472,

473, 474, 477ए, 489सी,

493, 494, 495 और 496

(ii) धारा 122, 222, 225, 305, "आजीवन कारावास या दस वर्ष से 371, 449, 450 अधिक अवधि के लिए कारावास"

(iii) धारा 124ए, 125, 128, "आजीवन कारावास या दोनों में से किसी

130, 194, 232, 238, 255 एक प्रकार का कारावास जिसे वर्षों तक बढाया जा ___ सकता है"

(iv) धारा 122, 225, 305, "आजीवन कारावास या दोनों में से किसी

371, 449 एक प्रकार का कारावास जिसे वर्षों तक बढाया जा ___ सकता है"

(v) धारा 304 बी "किसी अवधि के लिए कारावास जो सात वर्ष से कम नहीं होगा लेकिन जिसे आजीवन कारावास तक बढ़ाया जा सकता है"

(vi) धारा 376 "किसी अवधि के लिए कारावास जो सात वर्ष से कम नहीं होगा या आजीवन या किसी अवधि के लिए जिसे दस एच वर्ष तक

बढ़ाया जा सकता है"

1008 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

5. ऊपर देखी गई विभिन्न अभिव्यक्तियों के उपयोग से प्रदत्त शक्ति और अधिकार किसी अपराधी को सजा देने में न्यायालयों में निहित विशाल विवेक का संकेत देते हैं, जो किसी विशेष अपराध के लिए दोषी पाया गया है न तो दंड संहिता में और न ही लागू किसी अन्य कानून में, कहीं भी व्यायाम को नियंत्रित करने वाले नुस्खे या मानदंड या दिशानिर्देश भी सज़ा देने के मामले में व्यापक विवेकाधिकार का प्रावधान किया गया है शायद

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354(2) को छोड़कर, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ अदालत के फैसले में दी गई सजा के कारणों को बताने की आवश्यकता होती है। सजा के रूप में वर्षों की अवधि के लिए कारावास निर्धारित किया गया है। उपरोक्त स्थिति में, स्वाभाविक रूप से, सजा देने की शक्ति शक्ति के प्रयोग के लिए एक उद्देश्यपूर्ण और तर्कसंगत आधार को समझने के लिए गंभीर शैक्षणिक और न्यायिक बहस का विषय रही है और इसे नियंत्रित करने वाले ठोस न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों को विकसित करना उसका अभ्यास करें। इस संबंध में संविधान पीठ का फैसला जगमोहन सिंह बनाम यूपी राज्य (पुरानी संहिता के तहत) में इस न्यायालय के बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य में एक और संविधान पीठ का फैसला, मच्छी सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य में तीन न्यायाधीशों की पीठ का फैसला, वाटरशेड हैं के मामले में न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों की खोज में और सज़ा अन्य समान रूप से किसी भी संदर्भ का लोप इस न्यायालय की कई अन्य लोगों की राय पर प्रकाश डाला गया महत्वपूर्ण निर्णय उसके महत्व को कम करने के लिए नहीं हैं, बल्कि केवल संक्षिप्तता की आवश्यकता के कारण हैं। संगीत और अन्य बनाम राज्य हरियाणा और शंकर किसनराव खड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य में इस न्यायालय के दो हालिया फैसले जगमोहन सिंह (सुप्रा) के बाद से किए गए न्यायिक अभ्यासों के शुद्ध परिणाम को संक्षेप में प्रस्तुत करने के लिए इस न्यायालय के बहुत ही श्रमसाध्य और

श्रमसाध्य प्रयासों को दर्शाते हैं और इस संबंध में अनसुलझे मुद्दे और अस्पष्ट क्षेत्र और समाधान जो हो सकते हैं।

1. (1973) 1 एससीसी 20

2. (1980) 2 एससीसी 684

3. (1983) 3 एससीसी 470

4. (2013) 2 एससीसी 452

5. (2013) 5 एससीसी 546

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1009 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.]

प्रयास किया जाए। इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय हालांकि मौत की सजा देने की शक्ति के प्रयोग के संदर्भ में दिए हैं, क्या निर्धारित सिद्धांत, उपयुक्त अनुकूलन और संशोधन के साथ, सभी 'छोटी' स्थितियों पर लागू होंगे, जब तक कि अदालत का सामना किया जाता है सजा देने की शक्ति के प्रयोग के लिए मापदंडों को सुलझाने की जटिल समस्या एक और सवाल है जिससे निपटने की जरूरत है।

6. सटीकता के लिए बचन सिंह (सुप्रा) में जगमोहन सिंह (सुप्रा) से आए प्रस्तावों और प्रस्तावों (iv)(ए) और (वी)(बी) में बदलावों पर ध्यान

देना पर्याप्त हो सकता है। जिसे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354(3) के संशोधित प्रावधान के आलोक में आवश्यक माना गया था। उपरोक्त परिवर्तन संगीत (सुप्रा) में देखे गए थे और उन्हें सजा नीति के विकास के रूप में संदर्भित किया गया था। अपराध (जगमोहन सिंह) से ध्यान हटाकर अपराध और अपराधी (बचन सिंह) पर केंद्रित कर दिया। दो अवधारणाओं को उभरती सजा नीति के चरण- I और चरण- II के रूप में वर्णित किया गया था।

7. बचन सिंह (सुप्रा) में जगमोहन सिंह (सुप्रा) से निकाले गए सिद्धांत और प्रस्ताव (iv)(ए) और (वी)(बी) में बदलाव पर अब विशेष रूप से ध्यान दिया जा सकता है।

बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य 2

160. उपरोक्त परिप्रेक्ष्य के प्रकाश में, अब हम जगमोहन मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित प्रस्तावों के अधिकार और प्रभावकारिता पर उपरोक्त विधायी परिवर्तनों के प्रभाव पर विचार करेंगे। इन प्रस्तावों को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है:

"(i) सामान्य विधायी नीति जो हमारे आपराधिक कानून की संरचना को रेखांकित करती है, जो मुख्य रूप से भारतीय दंड संहिता और आपराधिक प्रक्रिया संहिता में निहित है, किसी अपराध को पर्याप्त स्पष्टता के साथ परिभाषित करना और उसके लिए केवल अधिकतम सजा निर्धारित

करना और अनुमति देना है को ठीक करने के मामले में न्यायाधीश को बहुत व्यापक विवेकाधिकार होता है।

1010 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

सज़ा की एक डिग्री।

धारा 303 के एकमात्र अपवाद के साथ, वही नीति धारा 302 और दंड संहिता की कुछ अन्य धाराओं में लागू होती है, जहां अधिकतम सजा मृत्युदंड है।

(ii)-(ए) गंभीर या कम करने वाली परिस्थितियों की कोई विस्तृत गणना संभव नहीं है, जिस पर किसी अपराधी को सजा देते समय विचार किया जाना चाहिए। "प्रत्येक मामले में मामलों और पहलुओं की अनंत विविधता सामान्य मानकों को या तो अर्थहीन 'बॉयलर प्लेट' या स्पष्ट बयान बना देगी जिसकी किसी जूरी (न्यायाधीश) को आवश्यकता नहीं होगी।" (मैकगौथा बनाम कैलिफ़ोर्निया के संदर्भ में)

(बी) मानकों को निर्धारित करने की असंभवता भारत में प्रशासित आपराधिक कानून के मूल में है जो सजा की डिग्री तय करने के मामले में न्यायाधीशों को बहुत व्यापक विवेक देता है।

(iii) फुरमैन बनाम जॉर्जिया में बहुलता द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने इस आशय से तय किया कि एक कानून जो जूरी (या न्यायाधीश) को मनमाने ढंग से चुनने

के लिए अनियंत्रित और अनियंत्रित विवेक देता है। मृत्युदंड और मृत्युदंड के अपराध के लिए कारावास की सजा, आठवें संशोधन का उल्लंघन है, जो भारत में लागू नहीं है। हमारे संविधान में आठवें संशोधन जैसा कोई प्रावधान नहीं है, न ही हम तर्कसंगतता की कसौटी को उस स्वतंत्रता के साथ लागू करने के लिए स्वतंत्र हैं जिसके साथ अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश "उचित प्रक्रिया" खंड को लागू करने के आदी हैं। हमारे देश में पश्चिमी अनुभव को रोपने की उपयुक्तता के बारे में गंभीर संदेह हैं। सामाजिक परिस्थितियाँ भिन्न हैं और सामान्य बौद्धिक स्तर भी। जो तर्क विश्व के एक क्षेत्र के संबंध में मान्य होंगे, वे दूसरे क्षेत्र के संबंध में मान्य नहीं हो सकते।

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1011 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.]

(iv) (ए) सजा के मामले में इस विवेक का प्रयोग न्यायाधीश द्वारा अपराध की सभी गंभीर और कम करने वाली परिस्थितियों को संतुलित करने के बाद न्यायिक रूप से किया जाना चाहिए।

(बी) विवेकाधिकार को वरिष्ठ न्यायालयों द्वारा ठीक किया जा सकता है। अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांतों पर न्यायिक विवेक का प्रयोग, अंतिम विश्लेषण में, अभियुक्त के लिए सबसे सुरक्षित सुरक्षा उपाय है।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह कहना असंभव होगा कि इसमें कोई भी भेदभाव होगा, क्योंकि अपराध के रूप में अपराध सतही तौर पर एक जैसा प्रतीत हो सकता है, लेकिन तथ्य और अपराध की परिस्थितियाँ व्यापक रूप से भिन्न होती हैं। इस प्रकार माना जाता है, दंड संहिता की धारा 302 में प्रावधान इस आधार पर संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं है कि यह न्यायाधीशों को मृत्युदंड या आजीवन कारावास देने के मामले में एक अनियंत्रित और अनियंत्रित विवेक प्रदान करता है।

(v)(ए) अपराध की प्रकृति और परिस्थितियों पर प्रभाव डालने वाले प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों को पूर्व-दोषी चरण में अदालत के सामने लाया जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों के संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कोई औपचारिक प्रक्रिया विशेष रूप से प्रदान नहीं की गई है। जहां वकील अभियुक्त के चरित्र और प्रतिष्ठा के संबंध में अदालत को संबोधित करता है, उन पर अदालत द्वारा विधिवत विचार किया जाता है जब तक कि साक्ष्य में कुछ ऐसा न हो जो उसे झुठलाता हो या लोक अभियोजक तथ्यों को चुनौती न देता हो।

(बी) इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि धारा 302 दंड संहिता में प्रदान किए गए दो वैकल्पिक वाक्यों में से किसी एक को चुनने के लिए अपने विवेक का प्रयोग करते हुए, "अदालत मुख्य रूप से उन तथ्यों और परिस्थितियों से चिंतित है, चाहे वे गंभीर हों या कम करने वाले, जो इससे

जुड़े हैं जांच के तहत विशेष अपराध। ऐसे सभी तथ्य और परिस्थितियां भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार मुकदमे में साबित होने में सक्षम हैं।

1012 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

सीआरपीसी द्वारा विनियमित। जब तक सभी प्रासंगिक तथ्य साबित नहीं हो जाते और दोनों पक्षों के वकीलों को अदालत को संबोधित करने का अवसर नहीं मिलता तब तक मुकदमा समाप्त नहीं होता है। केवल एक चीज जो बची है वह न्यायाधीश के लिए अपराध और सजा पर निर्णय लेना है और सीआरपीसी की धारा 306(2) और 309(2) का यही प्रावधान है। ये प्रावधान कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का हिस्सा हैं और जब तक यह नहीं दिखाया जाता कि वे किसी अन्य कारण से अमान्य हैं, उन्हें वैध माना जाना चाहिए। यह दिखाने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है कि वे संवैधानिक रूप से अमान्य हैं और इसलिए कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार मुकदमे के बाद दी गई मौत की सजा अनुच्छेद 21 के तहत असंवैधानिक नहीं है।" (जोर दिया गया)"

161. ऊपर दिए गए प्रस्तावों के अध्ययन से पता चलेगा। वास्तव में, जगमोहन मामले में निर्णय के बाद से विधायी परिवर्तनों से उनमें से किसी का भी अधिकार प्रभावित नहीं हुआ है। बेशक, उनमें से दो को विधायी नीति में बदलाव के साथ समायोजित और समायोजित करने की

आवश्यकता है। उन प्रस्तावों में से पहला नंबर (iv)(ए) है जो बताता है कि तत्कालीन मौजूदा आपराधिक प्रक्रिया संहिता के अनुसार दंड संहिता की धारा 302 में प्रदान किए गए दोनों वैकल्पिक वाक्य सामान्य वाक्य हैं और अदालत, इसलिए, विशेष मामले की गंभीर और कम करने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अपने विवेक से, उनमें से कोई एक सजा दे सकता है। इस अभिधारणा को अब धारा 354(3) द्वारा संशोधित किया गया है जो अदालत को किसी व्यक्ति को मौत की सजा वाले अपराध के लिए दोषी ठहराने या आजीवन कारावास या वर्षों की कैद के विकल्प के रूप में मौत की सजा नहीं देने का आदेश देता है। उस व्यक्ति को, जब तक कि ऐसी सज़ा के लिए "विशेष कारण" न हो - जिन्हें दर्ज किया जाना हो। इस प्रावधान के संदर्भ में अभिव्यक्ति "विशेष कारण" का स्पष्ट अर्थ अपराध के साथ-साथ अपराधी से संबंधित विशेष मामले की असाधारण गंभीर परिस्थितियों पर आधारित "असाधारण कारण" है। इस प्रकार, विधायी नीति अब बड़ी और स्पष्ट है।

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1013 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.]

धारा 354(3) का पहलू यह है कि दंड संहिता के तहत मौत के विकल्प के रूप में दंडनीय हत्या और अन्य मौत के अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाने पर, चरम दंड केवल चरम मामलों में ही लगाया जाना चाहिए।

163. एक अन्य प्रस्ताव, जिसका अनुप्रयोग, कुछ हद तक, विधायी परिवर्तनों से प्रभावित होता है, संख्या (v) है। उस प्रस्ताव के भाग (ए) में कहा गया है कि अपराध की प्रकृति और परिस्थितियों पर प्रभाव डालने वाली परिस्थितियों को दोषसिद्धि-पूर्व चरण से पहले रिकॉर्ड पर लाया जा सकता है। भाग (बी) में, इस बात पर जोर दिया गया है कि दंड संहिता की धारा 302 के तहत सजा का चयन करते समय, अदालत मुख्य रूप से जांच के तहत विशेष अपराध से जुड़ी परिस्थितियों से चिंतित होती है। अब, धारा 235(2) एक द्विभाजित मुकदमे का प्रावधान करती है और विशेष रूप से आरोपी व्यक्ति को सजा से पहले सुनवाई का अधिकार देती है, जिसके चरण में, वह रिकॉर्ड सामग्री या सबूत ला सकता है, जो पूरी तरह से प्रासंगिक या उससे जुड़ा नहीं हो सकता है। विशेष अपराध की जांच चल रही है, लेकिन फिर भी, धारा 354(3) में रेखांकित नीति के अनुरूप, सजा के चुनाव पर असर पड़ता है। धारा 354(3) के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 235(2) से समझ में आने वाली वर्तमान विधायी नीति यह है कि दंड संहिता की धारा 302 के तहत एक सहित विभिन्न अपराधों के लिए सजा की डिग्री तय करने या सजा का विकल्प चुनने में, अदालत को ऐसा नहीं करना चाहिए। अपने विचार को "मुख्यतः" या केवल विशेष

अपराध से जुड़ी परिस्थितियों तक ही सीमित रखें, बल्कि अपराधी की परिस्थितियों पर भी उचित विचार करें।

164. धारा 354(3) और 235(2) में उल्लिखित विधायी नीति के अनुरूप, जगमोहन में प्रस्ताव (iv)(ए) और (v)(बी) को फिर से तैयार करना होगा और इसे निम्नानुसार कहा जा सकता है:

"(ए) सामान्य नियम यह है कि हत्या के अपराध के लिए आजीवन कारावास की सजा दी जाएगी। अदालत उस नियम से हट सकती है और मौत की सजा दे सकती है।

1014 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

केवल तभी जब ऐसा करने के कोई विशेष कारण हों। मौत की सज़ा देने से पहले ऐसे कारणों को लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए।

(बी) दंड संहिता की धारा 302 के तहत हत्या के अपराध के लिए दी जाने वाली सजा के सवाल पर विचार करते समय, अदालत को अपराध के साथ- साथ अपराधी से संबंधित हर प्रासंगिक परिस्थिति का भी ध्यान रखना चाहिए। यदि अदालत को पता चलता है, लेकिन अन्यथा नहीं, कि अपराध असाधारण रूप से भ्रष्ट और जघन्य चरित्र का है और इसके डिजाइन और इसके निष्पादन के तरीके के कारण, बड़े पैमाने पर समाज के लिए गंभीर खतरे का स्रोत बनता है, तो अदालत जुर्माना लगा सकती है। मौत की सज़ा।"

8. संगीत (सुप्रा) में न्यायालय ने बचन सिंह (सुप्रा) में देखे गए "सुझावों" (बार में पेश किए गए) पर भी ध्यान दिया, जो अपराध में शामिल परिस्थितियों (गंभीर परिस्थितियों के रूप में वर्णित) के निर्धारण में प्रासंगिक थे। साथ ही वे जो अपराधी से संबंधित हैं और अपराध से अलग हैं (जिन्हें शमन करने वाली परिस्थितियाँ कहा जाता है)। न्यायाधीश केंद्रित नीति से अलग सिद्धांत आधारित सजा नीति के विकास के प्रयास में कुछ हद तक पटरी से उतरने/क्षरण का सामना करना पड़ा। वास्तव में, संगीत (उपरोक्त) में नोट किए गए और संदर्भित किए गए कई निर्णयों में आजीवन कारावास या मौत की सजा देने में सिद्धांतों के आवेदन में काफी अनिश्चितता आई है और अलग-अलग परिप्रेक्ष्य या प्रतिक्रियाएं सामने आई हैं। पूरे बोर्ड में लागू मानकीकृत न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों को विकसित करने के बजाय किसी दिए गए मामले के विशेष तथ्यों के आधार पर अदालत का निर्णय।

9. उपरोक्त स्थिति फिर से शंकर किसनराव खाड़े (सुप्रा) में देखी गई। भाई मदन बी. लोकुर द्वारा दी गई अलग-अलग सहमति वाली राय में इस न्यायालय द्वारा हाल के दिनों (पिछले 15 वर्षों) में दिए गए निर्णयों पर विस्तृत विचार किया गया है, जिसमें मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदल दिया गया है और ऐसे मामले भी हैं जिनमें

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1015 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.जे.]

मृत्युदंड की पुष्टि हो चुकी है। इस न्यायालय के अपने निर्णयों की विस्तृत सूची में व्यक्त किए गए विचारों के आधार पर, जिन कारणों को न्यायालय ने मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदलने के लिए पर्याप्त माना था, साथ ही मृत्युदंड की पुष्टि करने के कारणों को भी इसमें निर्धारित किया गया था। शंकर किसनराव खाड़े (सुप्रा) में रिपोर्ट के पैराग्राफ 106 और 122 पर सहमति वाले निर्णय, बचन सिंह (सुप्रा) के बाद से सामने आए सिद्धांतों पर ध्यान देने के लिए यहां नीचे दिए गए पैराग्राफ निकाले जा सकते हैं।

"106. उपरोक्त मामलों के अध्ययन से पता चलता है कि मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदलने के लिए संचयी रूप से कई कारण हैं। हालाँकि, सजा कम करने में प्रभाव डालने वाले कुछ कारकों में शामिल हैं:

(1) अभियुक्तों की कम उम्र [अमित बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र उम्र 20 साल, राहुल उम्र 24 साल, संतोष कुमार सिंह उम्र 24 साल, रमेशभाई चंदूभाई राठौड़ (2) उम्र 28 साल और अमित बनाम स्टेट ऑफ यूपी आयु 28 वर्ष];

(2) आरोपियों के सुधार और पुनर्वास की संभावना (संतोष कुमार सिंह 8 और अमित बनाम यूपी राज्य 10 में, संयोगवश, जब आरोपियों ने अपराध किया था तब वे युवा थे);

(3) अभियुक्त का कोई पूर्व आपराधिक रिकॉर्ड नहीं था (निर्मल सिंह, राजू, बंटू, अमित बनाम महाराष्ट्र राज्य

6. (2003) 8 एससीसी 93

7. राहुल बनाम. महाराष्ट्र राज्य (2005) 10 एससीसी 322

8. संतोष कुमार सिंह बनाम राज्य, (2010) 9 एससीसी 747

9. रमेशभाई चंदूभाई राठौड़ (2) बनाम गुजरात राज्य, (2011) 2 एससीसी 764

10. (2012) 4 एससीसी 107

11. निर्मल सिंह बनाम हरियाणा राज्य (1993) 3 एससीसी 670

12. राजू बनाम हरियाणा राज्य (2001) 9 एससीसी 50

13. बंटू बनाम म.प्र. राज्य (2001) 9 एससीसी 615

1016 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

सुरेंद्र पाल शिवबालकपाल, राहुल और अमित बनाम यूपी राज्य

(4) आरोपी के समाज या समुदाय के लिए ख़तरा या ख़तरा होने की संभावना नहीं थी (निर्मल सिंह, मोहम्मद चमन, राजू, बंटू, सुरेंद्र पाल शिवबालकपाल, राहुल और अमित बनाम यूपी राज्य

(5) कुछ अन्य कारणों का उल्लेख करने की आवश्यकता है जैसे कि आरोपी को एक अदालत द्वारा बरी कर दिया गया है (टी.एन. राज्य बनाम सुरेश, महाराष्ट्र राज्य बनाम सुरेश, भारत फकीरा धीवारी, मानसिंह और संतोष कुमार सिंह)

(6) अपराध पूर्व नियोजित नहीं था (कुमुदी लैप, अख्तर, राजू और अमृत सिंह)

(7) मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य (मानसिंह और बिष्णु प्रसाद सिन्हा) में से एक था। एक मामले में, कम करने का आदेश दिया गया था क्योंकि स्पष्ट रूप से मृत्युदंड की कोई "असाधारण" सुविधा नहीं थी (कुमुदी लाल) और दूसरे मामले में क्योंकि ट्रायल कोर्ट ने आजीवन कारावास की सजा सुनाई थी लेकिन उच्च न्यायालय ने इसे बढ़ाकर मृत्युदंड कर दिया था (हरेश मोहनदास राजपूत)

14. सुरेंद्र पाल शिवबालकपाल बनाम गुजरात राज्य (2005) 3 एससीसी 127

15. मो. चमन बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2001) 2 एससीसी 28

16. (1998) 2 एससीसी 372

17. (2000) 1 एससीसी 471

18. महाराष्ट्र राज्य बनाम भारत फकीरा धीवर, (2002) 1 एससीसी 622

19. महाराष्ट्र राज्य बनाम मानसिंह, (2005) 3 एससीसी 131

20. कुमुदी लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1999) 4 एससीसी 108

21. अख्तर बनाम यूपी राज्य, (1999) 6 एससीसी 60

22. अमृत सिंह बनाम पंजाब राज्य (2006) 12 एससीसी 79

23. बिष्णु प्रसाद सिन्हा बनाम असम राज्य (2007) 11 एससीसी 467

24. हरेश मोहनदास राजपूत बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2011) 12 एससीसी 56

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1017 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.]

122. उपरोक्त मामलों में मृत्युदंड ए की पुष्टि के प्रमुख कारणों में शामिल हैं:

(1) अपराध की क्रूर, पैशाचिक, नृशंस, भ्रष्ट और वीभत्स प्रकृति (जुम्मन खान, धनंजय चटर्जी, लक्ष्मण नायक, कामता तिवारी, निर्मल सिंह, जय कुमार, सतीश, बंटू, अंकुश मारुति शिंदे, बी.ए. उमेश, मोहम्मद मन्नान और राजेंद्र प्रह्लादराव वासनिक);

(2) अपराध के परिणामस्वरूप सार्वजनिक घृणा होती है, न्यायिक विवेक या समाज या सी समुदाय (धनंजय चटर्जी, जय कुमार, अंकुश मारुति शिंदे और मोहम्मद मन्नान) की अंतरात्मा को झटका लगता है।

(3) दोषी के सुधार या पुनर्वास की संभावना नहीं है या वह समाज के लिए खतरा होगा (जय कुमार, बी.ए. उमेश और मोहम्मद मन्नान)

(4) पीड़ित असहाय थे (धनंजय चटर्जी, लक्ष्मण नाइक, कामता तिवारी, अंकुश मारुति शिंदे, मोहम्मद मन्नान और राजेंद्र प्रह्लादराव वासनिक)

(5) अपराध या तो अकारण था या यह पूर्व नियोजित था (धनंजय चटर्जी, लक्ष्मण नायक, कामता तिवारी, निर्मल सिंह, जय कुमार, अंकुश

25. जुम्मन खान बनाम यूपी राज्य (1991) 1 एससीसी 752

26. धनंजय चटर्जी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (1994) 2 एससीसी 220

27. लक्ष्मण नाइक बनाम उड़ीसा राज्य, (1994) 3 एससीसी 381

28. कामता तिवारी बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (1996) 6 एससीसी 250

29. जय कुमार बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (1999) 5 एससीसी 1

30. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सतीश, (2005) 3 एससीसी 114

31. बंटू बनाम यूपी राज्य, (2008) 11 एससीसी 113

32. अंकुश मारुति शिंदे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2009) 6 एससीसी 667

33. बी.ए. उमेश बनाम कर्नाटक राज्य, (2011) 3 एससीसी 85

34. मो. मन्नान बनाम बिहार राज्य, (2011) 5 एससीसी 317

1018 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

मारुति शिंदे, बी.ए. उमेश एवं मो. मन्नान) और तीन मामलों में दोषी के पूर्ववृत्त या पूर्व इतिहास को ध्यान में रखा गया (शिवू, बी.ए. उमेश और राजेंद्र प्रह्लादराव वासनिक)।

हालाँकि, रिपोर्ट के पैराग्राफ 123 में ऐसे मामले देखे गए हैं जहां उपरोक्त में से किसी भी विचार को लेने के कारणों यानी कम्यूटेशन या पुष्टि से विचलन किया गया है। नतीजतन, प्रगतिशील मार्च अवरुद्ध हो गया था और सजा देने की कवायद एक अत्यधिक व्यक्तिगत और न्यायाधीश केंद्रित मुद्दे के रूप में रुकी हुई है।

10. क्या हमें यह समझना चाहिए कि किसी अपराधी पर एक विशेष सजा लगाने के लिए एक ठोस न्यायशास्त्रीय आधार की तलाश और खोज मायावी बनी रहेगी और इस देश में सजा के मानदंड न्यायाधीश केंद्रित बने रहने के लिए बाध्य हैं? हालांकि इस मुद्दे को मुख्य रूप से मृत्युदंड से जुड़े मामलों के संदर्भ में निपटाया गया है, लेकिन देश के आपराधिक न्यायशास्त्र के लिए यह काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि लागू विभिन्न विशेष कानूनों के तहत कई अपराधों के अलावा, दंड में सैकड़ों अपराध शामिल हैं। संहिता, जिसके लिए सज़ा एक दिन से लेकर 10 साल या यहाँ तक कि जीवन भर तक हो सकती है, एक स्थिति दंड संहिता के विभिन्न प्रावधानों में समान प्रतीत होने वाली अभिव्यक्तियों के उपयोग से संभव हुई जैसा कि इस आदेश के शुरुआती भाग में देखा गया है।

11. जैसा कि देखा गया है, जगमोहन सिंह (सुप्रा) के बाद से किए गए गहन अभ्यासों की बड़ी संख्या का "शुद्ध मूल्य" संगीत और शंकर किसनराव खड़े (सुप्रा) में प्रभावी ढंग से और व्यवस्थित रूप से निकाला गया है। पहचाने गए सिद्धांत सजा के लिए एक ठोस उद्देश्यपूर्ण आधार प्रदान कर सकते हैं जिससे व्यक्तिगत और न्यायाधीश केंद्रित दृष्टिकोण को कम किया जा सकता है। ऐसे सिद्धांत विदेशी न्यायक्षेत्रों में लागू सिद्धांतों के प्रति काफी हद तक समानता रखते हैं, जिसका सारांश पंजाब राज्य बनाम प्रेम सागर मामले में इस न्यायालय के फैसले में उपलब्ध है।

35. राजेंद्र प्रह्लादराव वासनिक बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2012) 4 एससीसी 37

36. शिवु बनाम कर्नाटक उच्च न्यायालय, (2007) 4 एससीसी 713

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र 1019 दिल्ली सरकार)

(रंजन गोगोई, जे.)

अन्य। अंतर सिद्धांतों की पहचान में नहीं है; यह व्यक्तिगत स्थितियों में इसके अनुप्रयोग के दायरे में निहित है। जबकि भारत में सिद्धांतों को लागू करना मामले की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश पर छोड़ दिया गया है, कुछ विदेशी न्यायालयों में ऐसे सिद्धांत क़ानून के अधिकार के तहत तैयार किए जाते हैं और अपराधों के वर्गीकरण के सिद्धांतों पर लागू होते हैं, जो हालांकि पाया गया है बचन सिंह (सुप्रा) में संविधान पीठ को हमारी व्यवस्था के लिए अनुपयुक्त माना जाएगा। सिद्धांतों को स्पष्ट रूप से विकसित और सुरक्षित रूप से स्थापित किया जा रहा है, शायद इसका उत्तर दृष्टिकोण में स्थिरता में निहित है।

12. मामले की मुख्य धारा की ओर लौटते हुए, हमें इस बात का कोई कारण नजर नहीं आता कि इस न्यायालय द्वारा वर्षों से मृत्युदंड के संदर्भ में विकसित किए गए सजा के सिद्धांत सभी छोटी सजाओं पर तब तक लागू क्यों नहीं होंगे जब तक सजा सुनाने वाले न्यायाधीश को पेंडुलम

के न्यूनतम से अधिकतम की ओर स्विंग के समान कम या अधिक सजा देने का विवेक निहित है। दरअसल, हमें सदियों पुराना अचूक तर्क याद आता है कि जो बात एक स्थिति के लिए अच्छी है, वह दूसरी जैसी स्थिति के लिए भी उतनी ही अच्छी होगी। बचन सिंह (सुप्रा) के पैराग्राफ 163 (रेखांकित भाग) के अलावा, जो पहले पुनः प्रस्तुत किया गया था, उपरोक्त तथ्य की गवाही देता है।

13. क्या उपरोक्त सिद्धांत धारा 304-बी के तहत अपराध के लिए दोषी पाए गए आरोपी को सजा देने पर लागू होंगे, क्योंकि कानूनी धारणा के आधार पर उक्त अपराध आरोपी के खिलाफ साबित माना जाता है? यह अगला प्रश्न है जिससे निपटना होगा। जब तक दहेज की मांग के कारण होने वाली क्रूरता के विश्वसनीय सबूत मौजूद हैं, तब तक शादी के सात साल के भीतर किसी महिला की अप्राकृतिक मृत्यु होने पर ऐसी महिला के पति या पति के किसी रिश्तेदार को "दहेज मृत्यु" के अपराध के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। धारा 304-बी के तहत, हालांकि संबंधित मौत में पति या ऐसे रिश्तेदार की कोई प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं हो सकती है। ऐसी स्थिति में जहां किसी अपराध के घटित होने को कानूनी अनुमान के माध्यम से साबित किया जाता है, अपराध के आसपास की परिस्थितियाँ

37. (2008) 7 एससीसी 550

गंभीर परिस्थितियों (अपराध परीक्षण) की उपस्थिति का निर्धारण करता है उस मामले के विपरीत आसानी से सामने नहीं आ सकता है जहां अपराध के साथ अभियुक्त की प्रत्यक्ष संलिप्तता को स्थापित करने वाले प्रत्यक्ष आपराधिक कृत्यों के सबूत हैं ताकि अदालत को अपराध की बर्बर या भ्रष्ट प्रकृति के संबंध में विशिष्ट निष्कर्ष पर पहुंचने में सक्षम बनाया जा सके। दहेज की मांग के खतरे से निपटने या महिलाओं पर अत्याचार रोकने की आवश्यकता और साथ ही सामाजिक बुराइयों के साथ-साथ सामाजिक विवेक की शुद्धता बनाए रखने की आवश्यकता सजा की मात्रा का निर्धारण नहीं कर सकती है क्योंकि उक्त पैरामीटर सभी के लिए समान होंगे। दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत अपराध। इसलिए, उपरोक्त को मामले-दर-मामले के आधार पर अलग-अलग डिग्री की सज़ा देने के लिए तर्कसंगत आधार के रूप में कार्य करने के लिए स्वीकार्य न्यायशास्त्रीय सिद्धांतों की स्थिति तक नहीं बढ़ाया जा सकता है। इसलिए, दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत किसी अपराध में अपराध परीक्षण को संतुष्ट करने के सिद्धांतों की खोज कहीं और होनी चाहिए। शायद, विवाह और स्त्री की मृत्यु के बीच का समय; पीड़िता की मृत्यु से पहले उसके प्रति अभियुक्त का रवैया और आचरण; दहेज की मांग किस हद तक जारी रही और क्रूरता के तरीके और परिस्थितियां अपराध परीक्षण के निर्धारण के लिए एक निश्चित आधार होंगी। उपरोक्त के साथ, यह तथ्य कि क्या अभियुक्त पर दंड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध का भी आरोप लगाया गया था और

उक्त आरोप से उसके बरी होने का आधार एक और बहुत ही प्रासंगिक परिस्थिति होगी। इसके विपरीत, "आपराधिक परीक्षण" का निर्धारण करने वाली शमन/कम करने वाली परिस्थितियों को पूरी तरह से खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए। परिस्थितियों के उपरोक्त दो सेट परस्पर असंगत होने के कारण उन्हें बैलेंस शीट के रूप में व्यवस्थित नहीं किया जा सकता है जैसा कि संगीत (सुप्रा) में देखा गया है, लेकिन यह विभिन्न परिस्थितियों के दो सेटों का संचयी प्रभाव जी है जिसे प्रस्तुत करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। सज़ा का निर्णय हमारे अनुसार, जहां तक दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत अपराध का संबंध है, सजा के सवाल से निपटने के दौरान यह सही दृष्टिकोण होगा।

सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (एनसीटी 1021 दिल्ली सरकार)

[रंजन गोगोई, जे.]

14. उपरोक्त मापदंडों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करने से यह पता चलता है कि आरोपी-अपीलकर्ता की पत्नी की मृत्यु शादी के दो साल के भीतर हुई थी। बेशक, दहेज की मांग थी और क्रूरता या उत्पीड़न के सबूत हैं। मृतक की शव परीक्षण रिपोर्ट में चोटों के बाहरी निशान दिखाई दिए लेकिन मृतक की मौत का कारण गला घोंटने के कारण दम घुटना बताया गया। डॉ. एल.टी. रमानी (पीडब्लू-16) के उपरोक्त निष्कर्ष के मद्देनजर जिन्होंने पोस्टमॉर्टम किया था, विद्वान ट्रायल जज ने संदेह के

लाभ पर दंड संहिता की धारा 302 के तहत आरोपी को अपराध से बरी करना उचित समझा क्योंकि इस बात का कोई सबूत नहीं था कि आरोपी किसी भी तरह से, मृतक का गला घोंटने में शामिल है। सिद्ध तथ्य जिनके आधार पर दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत अपराध को स्थापित माना गया था, दंड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध के आरोपी-अपीलकर्ता को बरी करते समय, किसी भी असाधारण, विकृत या शैतानी का खुलासा नहीं करता है मामले पर गंभीरता से विचार करने के लिए आरोपी-अपीलकर्ता की ओर से कार्रवाई करें। उपरोक्त के साथ, अपराध के समय, आरोपी-अपीलकर्ता की उम्र लगभग 21 वर्ष थी और आज की तारीख में वह लगभग 42 वर्ष का है। अभियुक्त-अपीलकर्ता का एक बेटा भी है जो घटना के समय शिशु था। उसका अपराध का कोई पिछला रिकॉर्ड नहीं है, उन सिद्धांतों के संचयी अनुप्रयोग पर जो अपराध और आपराधिक परीक्षण का निर्णय करने के लिए प्रासंगिक होंगे, हमारा विचार है कि वर्तमान ऐसा मामला नहीं है जहां आरोपी-अपीलकर्ता को आजीवन कारावास की अधिकतम सजा दी जानी चाहिए। साथ ही, विद्वान ट्रायल कोर्ट के आदेश से, यह स्पष्ट है कि मृतक की कुछ चोटें, हालांकि स्पष्ट रूप से घातक चोटें नहीं हैं, आरोपी-अपीलकर्ता के कारण हैं। वास्तव में, विद्वान ट्रायल कोर्ट का निष्कर्ष यह है कि चोटें नंबर 1 (बालों के किनारे के पास माथे की तरफ गहरी त्वचा पर चोट 1"x½" जी त्वचा पर चोट) और 2 (सिर पर गहरी चोट 1½"x1" खोपड़ी पर चोट मृतक पर ललाट क्षेत्र) आरोपी-अपीलकर्ता

द्वारा मूसल से हमला किया गया था। विद्वान ट्रायल कोर्ट के आदेश के उक्त भाग को उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में चुनौती नहीं दी गई है।

1022 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2013] 9 एस.सी.आर.

उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि वर्तमान मामले में निर्धारित न्यूनतम सजा यानी सात साल भी न्याय के उद्देश्य को पूरा नहीं करेगी। बल्कि हमारा मानना है कि दस साल की सश्रम कारावास की सज़ा उचित होगी। नतीजतन, हम दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 04.04.2011 को संशोधित करते हैं और दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत अपराध के लिए आरोपी-अपीलकर्ता पर दस साल की सश्रम कारावास की सजा लगाते हैं। जुर्माने की सजा बरकरार रखी गयी है। अभियुक्त-अपीलकर्ता जो वर्तमान में हिरासत में है, शेष भाग की सेवा करेगा वर्तमान आदेश के संदर्भ में।

15. तदनुसार, ऊपर बताई गई सीमा तक अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

आर.पी.

अपील आंशिक रूप से स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुधीर चौहान (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।